

## श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 86 — सुभद्रा और मिथिला

5 October 2026



एक ही क्षण में एक राजा और एक निर्धन ब्राह्मण के निमंत्रण पाकर श्रीकृष्ण दोनों के घरों में एक साथ प्रवेश करते हैं, और दोनों स्थानों पर यह सिद्ध कर देते हैं कि उन्हें अपने भक्त से बढ़कर कोई प्रिय नहीं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध का यह छियासीवाँ अध्याय बताता है कि संन्यासी-वेश में अर्जुन ने सुभद्रा को कैसे पाया, और फिर हमें मिथिला ले चलता है, जहाँ श्रीकृष्ण ब्राह्मण श्रुतदेव और राजा बहुलाश्व पर कृपा कर बताते हैं कि वे कैसे पूजित होना चाहते हैं।

### अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 86 (षडशीतितम अध्याय)

- अध्याय शीर्षक: अर्जुन का सुभद्रा-हरण तथा श्रुतदेव और बहुलाश्व पर भगवान की कृपा
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (बहुलाश्व, श्रुतदेव और भगवान श्रीकृष्ण के वचनों सहित)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: द्वारका, तथा विदेह की राजधानी मिथिला
- केंद्रीय विषय: सुभद्रा का अर्जुन से विवाह; मिथिला के दो भक्तों के यहाँ श्रीकृष्ण का आगमन; उनकी यह शिक्षा कि सन्त ब्राह्मण उनका अपना स्वरूप है
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 86, श्लोक 1-59
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध)

## पूर्व अध्याय का संदर्भ

पचासीवें अध्याय में श्रीकृष्ण और बलराम बलि के लोक से देवकी के उन छह पुत्रों को लौटा लाए जिन्हें कंस ने मारा था, और शाप से मुक्त वे बालक स्वर्ग को चले गए। अब परीक्षित अपने ही परिवार से जुड़ी एक लीला के विषय में पूछते हैं।

## परीक्षित का प्रश्न

राजा ने शुकदेवजी से पूछा कि अर्जुन ने बलराम और श्रीकृष्ण की बहन सुभद्रा से, जो स्वयं उनकी दादी थीं, विवाह कैसे किया।

## संन्यासी के वेश में अर्जुन

शुकदेवजी ने कहा कि तीर्थयात्रा में पृथ्वी पर घूमते हुए बलशाली अर्जुन प्रभास पहुँचे और वहाँ अपने मामा वसुदेव की कन्या सुभद्रा के विषय में सुना। उन्हें यह भी ज्ञात हुआ कि बलराम उसे दुर्योधन को देना चाहते हैं, और किसी को नहीं। उसे पाने की कामना से अर्जुन त्रिदण्ड धारण कर संन्यासी का वेश बनाकर द्वारका पहुँचे।

वहाँ उन्होंने वर्षा के चार मास बिताए; नगरवासी और स्वयं बलराम, जो उन्हें पहचान न सके, उनका सम्मान करते रहे। एक दिन बलराम उस कथित संन्यासी को अतिथि बनाकर घर ले आए और श्रद्धा से भोजन कराया। वहीं अर्जुन ने युवती सुभद्रा को देखा, जिसका रूप वीरों के मन को मोह लेता था, और उनका हृदय उसकी ओर खिंच गया। सुभद्रा भी उन्हें देखते ही मुग्ध हो गई और लज्जा-भरी तिरछी चितवन से उन पर अपना हृदय और दृष्टि टिका दी। तब से अर्जुन उसी का चिन्तन करते हुए अवसर खोजने लगे, और उनके मन को शान्ति न मिली।



त्रिदण्डी संन्यासी के वेश में अर्जुन वर्षा के चार मास द्वारका में बिताते हैं; नगरवासी उनका सम्मान करते हैं और बलराम, जो उन्हें पहचान नहीं पाते, उन्हें अपने घर अतिथि बनाकर ले आते हैं (श्लोक 2-5)।

## द्वारका से सुभद्रा का प्रस्थान

वह अवसर देवताओं के एक महान् उत्सव के दिन आया, जब सुभद्रा रथ पर बैठकर मन्दिर-दर्शन के लिए दुर्ग से बाहर निकली। अर्जुन उसे ले गए, और यह उन्होंने उसके माता-पिता देवकी-वसुदेव तथा स्वयं श्रीकृष्ण की सम्मति से किया।

महत्यां देवयात्रायां रथस्थां दुर्गनिर्गताम् ।

जहारानुमतः पित्रोः कृष्णस्य च महारथः ॥ ९ ॥

*mahatyām deva-yātrāyām ratha-sthām durga-nirgatām jahārānumataḥ pitroḥ kṛṣṇasya ca mahā-rathaḥ*

अर्थ: देवताओं के एक महान् उत्सव के अवसर पर, जब सुभद्रा रथ पर बैठी दुर्ग से बाहर निकली, तब महारथी अर्जुन उसके माता-पिता और श्रीकृष्ण की अनुमति से उसे हर ले गए। (स्कन्ध 10, अध्याय 86, श्लोक 9)

रथ पर खड़े होकर धनुष उठाए अर्जुन ने रोकने आए रक्षकों को भगा दिया, और स्वजनों के चिल्लाते रहने पर भी वे अपनी वधू को ऐसे ले गए जैसे सिंह अपना भाग ले जाता है।



देवताओं के महान् उत्सव के दिन, जब सुभद्रा मन्दिर-दर्शन को दुर्ग से निकलती हैं, अर्जुन उनके रथ की बागडोर थामकर उनके माता-पिता और श्रीकृष्ण की सम्मति से उन्हें ले जाते हैं (श्लोक 9-10)।

## बलराम का क्रोध और उनका आशीर्वाद

यह समाचार सुनकर बलराम पूर्णिमा के समुद्र की भाँति क्षुब्ध हो उठे, किन्तु श्रीकृष्ण और अन्य स्वजनों ने उनके चरण पकड़कर उन्हें शान्त कर दिया। तब प्रसन्न होकर बलराम ने वर-वधू के लिए विपुल धन, गृहस्थी की सामग्री, हाथी, रथ, घोड़े तथा दास-दासियों का दहेज भेजा।

## मिथिला के दो भक्त

फिर शुकदेवजी ने नई कथा आरम्भ की। विदेह की राजधानी मिथिला में श्रुतदेव नामक एक ब्राह्मण-रत्न रहता था; श्रीकृष्ण में अनन्य भक्ति से उसके सब प्रयोजन सिद्ध थे, और वह शान्त, ज्ञानी और विषय-लालसा से रहित था। गृहस्थ होकर भी वह बिना माँगे जो मिल जाए उसी पर निर्वाह करता था; प्रतिदिन उसे उतना ही मिलता जितना आवश्यक था, कभी अधिक नहीं, और उसी में सन्तुष्ट रहकर वह अपने कर्तव्य निभाता था। उस देश का राजा बहुलाश्व भी वैसा ही भक्त था और सब प्रकार के अभिमान से मुक्त था। दोनों ही अच्युत भगवान को प्रिय थे।

## विदेह की ओर श्रीकृष्ण की यात्रा

दोनों पर प्रसन्न भगवान दारुक के लिए रथ पर चढ़कर मुनियों के साथ विदेह की ओर चले: नारद, वामदेव, अत्रि, कृष्णद्वैपायन व्यास, परशुराम, असित, आरुणि, स्वयं शुकदेव, बृहस्पति, कण्व, मैत्रेय, च्यवन और अन्य। मार्ग में नगरवासी और ग्रामवासी भेंट लेकर उनकी सेवा में आते रहे, और मुनियों के बीच वे ग्रहों से घिरे उदित सूर्य-से शोभित हुए।

आनर्त, धन्व, कुरुजांगल, कंक, मत्स्य, पांचाल, कुन्ति, मधु, केकय, कोसल, अर्ण तथा अन्य देशों के नर-नारी अपनी आँखों से उनके मुस्कराते मुख-कमल का पान करते रहे। जिनके अज्ञान का अन्धकार उनके दर्शन से मिट गया, उन्हें त्रिलोकगुरु ने तत्त्वदृष्टि और परम कल्याण दिया, और अपने यश का गान सुनते हुए वे धीरे-धीरे विदेह पहुँचे।

## भगवान का दोनों घरों में एक साथ प्रवेश

भगवान के आगमन का समाचार सुनकर मिथिलावासी हर्ष से भेंट लेकर आगे आए और उन्हें तथा उन मुनियों को, जिनका केवल नाम ही सुना था, हाथ जोड़कर प्रणाम किया। जगद्गुरु अनुग्रह करने पधारे हैं, यह जानकर राजा और श्रुतदेव दोनों उनके चरणों में गिर पड़े, और एक ही क्षण दोनों ने श्रीकृष्ण और ब्राह्मणों को आतिथ्य के लिए निमंत्रित किया।

भगवांस्तदभिप्रेत्य द्वयोः प्रियचिकीर्षया ।

उभयोराविशद् गेहमुभाभ्यां तदलक्षितः ॥ २६ ॥

*bhagavāṁs tad abhipretya dvayoḥ priya-cikīrṣayā ubhayor āviśad geham ubhābhyāṁ tad-alakṣitaḥ*

अर्थ: उनका अभिप्राय समझकर और दोनों को प्रसन्न करने की इच्छा से भगवान ने दोनों के घरों में प्रवेश किया, और किसी को भी यह ज्ञात न हुआ कि वे दूसरे के यहाँ भी गए हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 86, श्लोक 26)

## बहुलाश्व की पूजा

उदारचेता जनक बहुलाश्व ने श्रीकृष्ण और मार्ग से थके मुनियों को उत्तम आसनों पर बिठाया। आनन्द के आँसुओं से भीगी आँखों वाले राजा ने प्रणाम कर उनके चरण धोए और वह पावन जल परिवार सहित अपने सिर पर धारण किया। उन्होंने चन्दन, माला, वस्त्र, आभूषण, धूप, दीप, अर्घ्य तथा गौ-बैलों से उनकी पूजा की। भोजन से तृप्त होने पर उन्होंने विष्णु के चरण अपनी गोद में लेकर धीरे-धीरे दबाए और मधुर वाणी में स्तुति की।



अपने राजभवन में उदारचेता बहुलाश्व श्रीकृष्ण और मुनियों के चरण धोते हैं, चन्दन, माला, वस्त्र, दीप और गौओं से उनकी पूजा करते हैं और फिर भगवान के चरण अपनी गोद में ले लेते हैं (श्लोक 27-30)।

## राजा बहुलाश्व को स्तुति

राजा ने कहा, “आप समस्त प्राणियों के आत्मा हैं, भीतर के साक्षी, स्वयंप्रकाश और सर्वशक्तिमान; और आज आप हम लोगों के सामने आए हैं, जो आपके चरण-कमलों का स्मरण करते हैं। आपने अपना ही वचन सत्य करने के लिए स्वयं को प्रकट किया है।”

स्ववचस्तदृतं कर्तुमस्मद्गोचरो भवान् ।

यदात्यैकान्तभक्तान् मे नानन्तः श्रीरजः प्रियः ॥ ३२ ॥

*sva-vacas tad ṛtaṁ kartum asmad-dṛg-gocarō bhavān yad ātthaikānta-bhaktān me nānantaḥ śrīr ajah priyaḥ*

अर्थ: आप अपने उस वचन को सत्य करने के लिए हमारी दृष्टि के सामने आए हैं, जिसमें आपने कहा था कि अनन्त (बलराम), लक्ष्मी और अजन्मा ब्रह्मा भी आपको उतने प्रिय नहीं जितने आपके अनन्य भक्त। (स्कन्ध 10, अध्याय 86, श्लोक 32)

राजा ने पूछा कि यह जानकर कि आप अकिंचन, शान्त मुनियों को अपना आपा तक दे देते हैं, कौन आपके चरण-कमल छोड़ सकता है? यदुवंश में अवतरित होकर आपने संसार में भटकते लोगों की शान्ति के लिए ऐसा यश फैलाया है जो तीनों लोकों के पाप हर लेता है। नारायण ऋषि के रूप में परम शान्त तप करने वाले अकुण्ठ-बुद्धि श्रीकृष्ण को प्रणाम कर उन्होंने प्रार्थना की कि वे कुछ दिन यहीं रहें और अपनी चरण-धूलि से निमि के वंश को पवित्र करें। इस निमंत्रण पर भगवान वही रहे और मिथिला के नर-नारियों का कल्याण करते रहे।

## श्रुतदेव का स्वागत

जनक की ही भाँति श्रुतदेव भी भगवान को द्वार पर पाकर आनन्द से भर उठे और मुनियों को प्रणाम कर वस्त्र हिलाते हुए नाचने लगे। उन्होंने अतिथियों को तृण और कुश के आसनों पर बिठाया, स्वागत-वचनों से अभिनन्दन किया और पत्नी सहित प्रसन्नता से उनके चरण धोकर वह जल अपने ऊपर, घर और परिवार पर छिड़का। जो सहज मिल सका उसी से उन्होंने पूजा की: फल, सुगन्धित उशीर, शुद्ध मीठा जल, सुगन्धित मिट्टी, तुलसीदल, कुश, कमल और सात्त्विक अन्न; और सोचते रहे कि गृहस्थी के अन्धकूप में पड़े उन्हें श्रीकृष्ण और उन मुनियों का संग कैसे मिला जिनकी चरण-धूलि समस्त तीर्थों को पवित्र करती है। भोजन के बाद श्रुतदेव पत्नी और सन्तान सहित श्रीकृष्ण के चरण छूकर बोले।

## श्रुतदेव की स्तुति

उन्होंने कहा, “हे परम पुरुष, आपका दर्शन हमें आज ही नहीं मिला; आप तभी से हमारे साथ हैं जब से आपने अपनी शक्तियों से यह जगत् रचकर उसमें प्रवेश किया, जैसे सोया हुआ मनुष्य स्वप्न-जगत् रचकर उसके भीतर प्रकट होता है। जो शुद्धचित्त लोग निरन्तर आपकी कथा सुनते-कहते और आपकी पूजा-वन्दना करते हैं, उनके हृदय में आप प्रकाशित होते हैं।”

हृदिस्थोऽप्यतिदूरस्थः कर्मविक्षिप्तचेतसाम् ।

आत्मशक्तिभिरग्राह्योऽप्यन्युपेतगुणात्मनाम् ॥ ४७ ॥

*hṛdi-stho 'py ati-dūra-sthaḥ karma-vikṣipta-cetasām ātma-śaktibhir agrāhyo 'py anty upeta-guṇātmanām*

अर्थ: हृदय में विराजमान होकर भी आप उन लोगों से अत्यन्त दूर रहते हैं जिनका चित्त सांसारिक कर्मों में बिखरा है; और यद्यपि कोई अपनी शक्ति से आपको पकड़ नहीं सकता, आप उनके अत्यन्त निकट रहते हैं जिनके हृदय में भक्ति के गुण आ गए हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 86, श्लोक 47)

उन्होंने उन भगवान को प्रणाम किया जो आत्मज्ञानियों के लिए परमात्मा हैं और देह को ही आत्मा मानने वालों के लिए मृत्यु, जिनकी दृष्टि को माया कभी ढक नहीं सकती, और पूछा, “हे प्रभु, हम सेवकों को आज्ञा दीजिए: हम आपके लिए क्या करें? जिस क्षण आप मनुष्यों की आँखों के सामने आते हैं, उनके क्लेशों का अन्त हो जाता है।”

## श्रीकृष्ण ब्राह्मण का हाथ थामते हैं

यह सुनकर शरणागतों का दुःख हरने वाले भगवान ने श्रुतदेव का हाथ अपने हाथ में लिया और मुस्कराते हुए बोलने लगे।



ब्राह्मण का हाथ अपने हाथ में लेकर श्रीकृष्ण मुस्कराते हुए उसे सिखाते हैं कि सन्त ब्राह्मण उन्हें अपने चतुर्भुज रूप से भी प्रिय है, और श्रद्धा से मुनियों की पूजा उन्हीं की साक्षात् पूजा है (श्लोक 50-57)।

## सन्त ब्राह्मण के विषय में भगवान की शिक्षा

श्रीकृष्ण ने कहा, “हे ब्राह्मण, जान लो कि ये मुनि केवल तुम पर अनुग्रह करने आए हैं। ये मेरे साथ लोकों में विचरते हुए अपनी चरण-धूलि से उन्हें पवित्र करते हैं। देवता, तीर्थ और पवित्र जल दर्शन, स्पर्श और पूजा से धीरे-धीरे, बहुत समय में शुद्ध करते हैं; किन्तु सन्त दृष्टि मात्र से तुरन्त शुद्ध कर देते हैं, और तीर्थ भी ऐसे महात्माओं से ही शक्ति पाते हैं। ब्राह्मण जन्म से ही सब प्राणियों में श्रेष्ठ है, और तप, विद्या, सन्तोष और मेरी भक्ति से युक्त हो तब तो कहना ही क्या।”

न ब्राह्मणान्मे दयितं रूपमेतच्चतुर्भुजम् ।  
सर्ववेदमयो विप्रः सर्वदेवमयो ह्यहम् ॥ ५४ ॥

*na brāhmaṇān me dayitaṁ rūpam etac catur-bhujam sarva-veda-mayo vipraḥ sarva-deva-mayo hy aham*

अर्थ: मेरा यह चतुर्भुज रूप भी मुझे ब्राह्मण से अधिक प्रिय नहीं है, क्योंकि ब्राह्मण समस्त वेदों का स्वरूप है और मैं समस्त देवताओं का। (स्कन्ध 10, अध्याय 86, श्लोक 54)

भगवान ने आगे कहा, “मन्दबुद्धि लोग यह नहीं जानते। ईर्ष्या से भरे वे केवल प्रतिमा में ही पूज्य को देखते हैं और उस ब्राह्मण का अनादर करते हैं जो जगद्गुरु है, जो मैं ही हूँ और उनका अपना आत्मा है। मुझे सर्वत्र देखने वाला ब्राह्मण जानता है कि यह जगत् अपने कारणों सहित मेरे ही रूप है। इसलिए, श्रुतदेव, मुझमें जो श्रद्धा है उसी से इन मुनियों की पूजा करो। तभी मैं साक्षात् पूजित होता हूँ; और किसी उपाय से नहीं, विपुल धन-वैभव से भी नहीं।”

यहाँ इस यात्रा का प्रयोजन प्रकट हो जाता है। श्रीकृष्ण मिथिला इसलिए आए कि अपना यह वचन सत्य कर दिखाएँ कि अनन्य भक्त उन्हें बलराम, लक्ष्मी और ब्रह्मा से भी प्रिय है; और दो घरों में एक साथ प्रवेश कर इसे सिद्ध करने के बाद उन्होंने दिखाया कि इस प्रेम का उत्तर कहाँ देना है: अपने भक्तों को उन्हीं के समान आदर देकर।

## अध्याय का समापन

इस प्रकार उपदेश पाकर श्रुतदेव ने श्रीकृष्ण और मुनियों की एकात्म-भाव से आराधना की और परम गति पाई; बहुलाश्व को भी वही गति मिली। भक्तों के भक्त भगवान इन दोनों के पास रहे, उन्हें सन्मार्ग का उपदेश दिया और द्वारका लौट गए।

## इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भक्त भगवान को सबसे अधिक प्रिय है। बहुलाश्व श्रीकृष्ण को उनका वचन स्मरण कराते हैं कि बलराम, लक्ष्मी और ब्रह्मा भी उन्हें उतने प्रिय नहीं जितना अनन्य भक्त; मिथिला में दो रूपों में प्रकट होना इसे सिद्ध करता है।
2. भगवान शुद्ध हृदय के निकट और विक्षिप्त मन से दूर हैं। हर हृदय में रहते हुए भी वे सांसारिक कर्मों में बिखरे लोगों से दूर और अपना श्रवण-कीर्तन करने वालों के निकट हैं।
3. सन्त तुरन्त वह कर देते हैं जो तीर्थ धीरे-धीरे करते हैं। श्रीकृष्ण महात्मा की दृष्टि को तीर्थयात्रा और मन्दिर-पूजा से ऊपर रखते हैं, क्योंकि तीर्थों की पवित्रता सन्तों से ही आती है।
4. सन्त ब्राह्मण भगवान का अपना शरीर है। श्रीकृष्ण को अपना चतुर्भुज रूप भी भक्त-ब्राह्मण से अधिक प्रिय नहीं; केवल विग्रह को पूजते हुए उसका अनादर करना कुटिल बुद्धि का लक्षण है।

5. भगवान अपने सेवकों के द्वारा साक्षात् पूजित होते हैं। श्रद्धा से भगवद्भक्तों का सम्मान भगवान की प्रत्यक्ष पूजा है, जिसकी बराबरी कोई धन-वैभव नहीं कर सकता।

## एक भक्तिमय चिन्तन

यहाँ हृदय को सबसे अधिक जो छूता है वह श्रीकृष्ण के दो रूपों का चमत्कार नहीं, बल्कि वे दो नितान्त भिन्न घर हैं जिन्हें उन्होंने चुना। एक राजमहल था जहाँ उत्तम आसन और दान की गौएँ थीं; दूसरे में तृण की चटाइयाँ, फल, मिट्टी और तुलसी। श्रीकृष्ण दोनों में समान आनन्द से बैठे, और दोनों गृहस्वामियों को एक ही सिद्धि मिली। भगवान स्वागत को उसके मूल्य से नहीं, उसके पीछे के हृदय से नापते हैं। जब श्रुतदेव ने पूछा कि वे क्या सेवा करें, तो श्रीकृष्ण ने द्वार पर बैठे मुनियों की ओर संकेत किया: इनकी सेवा करो, और मेरी सेवा हो गई। शायद भगवान हमारे द्वार पर भी इसी प्रकार खड़े हैं, उन भक्तों के रूप में जिन्हें अनदेखा कर हम उन्हें कहीं और खोजते हैं।

## एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज भगवान के किसी एक भक्त का वैसा ही सम्मान करें जैसा स्वयं भगवान का — आदर का एक सच्चा वचन, कोई छोटी-सी सेवा, या श्रद्धा से दी गई भेंट — यह स्मरण रखते हुए कि श्रीकृष्ण के वचन के अनुसार ऐसी सेवा सीधे उन तक पहुँचती है। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

## उपसंहार

यह अध्याय सुभद्रा के उस विवाह को, जिसे अन्ततः बलराम का आशीर्वाद मिला, मिथिला में श्रीकृष्ण के उस आगमन से जोड़ता है जहाँ एक राजा और एक निर्धन ब्राह्मण ने उन्हें एक ही क्षण अपने घर पाया। इसका हृदय भगवान की यह घोषणा है कि भक्त उन्हें अपने दिव्य रूप से भी प्रिय है और उनकी सबसे प्रत्यक्ष पूजा श्रद्धा से उनके सेवकों की सेवा है। हम बहुलाश्र और श्रुतदेव से भगवद्भक्तों को प्रेम से अपनाना सीखें, और स्वयं भगवान को अपने घरों में उपस्थित पाएँ।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

## संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), अध्याय 86।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: [kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-86-subhadra-and-the-devotees-of-mithila-hi.html](http://kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-86-subhadra-and-the-devotees-of-mithila-hi.html)

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

